© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 04 , Issue : 06 | July - September 2018

श्री मद् भगवत गीता में वर्णित 'आत्म–संयम' का स्वरूप

श्री जयपाल सिंह राजपूत[1] , बबीता[2]
Assi. Professor Department of Yog Science, CRSU, Jind
M.A Yog Student, Roll No. 3231, Department of Yog Science, CRSU, Jind

शोध सार–इसांन अपना वो चेहरा तो खूब सजाता है,
जिस पर लोगो की नजर होती है।
मगर आत्मा को सजाने की कोशिश कोई नही करता,
जिस पर परमात्मा की नजर होती है।

परमात्मा ने सृष्टी की रचना कब और कितने वर्षो पहले की इस बारे स्पष्ट नहीं कहा जा सकता, परन्तु सृष्टि की रचना क्योकि इस बारे मे हमारे देश के महान ऋषि– मुनियो और संत महापुरूषो द्वारा बतलाया गया है कि इस संसार की उत्पति परमात्मा ने अपनी इच्छा से की है ताकि वह (परमात्मा) एक से अनेक हो सके। इस संसार का सबसे अमूल्य प्राणी मनुष्य को बनाकर इस धरती पर भेजा। परमात्मा ने मनुष्य को सबसे ज्यादा विवेक बुद्वि दी कि वह आत्मिक चितंन करता हुआ मोक्ष प्राप्त करके अपनी आत्मा को परमात्मा मे विलिन (एकाकार) कर सके।

श्री कृष्ण जी कहते है

शरीर, इन्द्रिया और मन की भली भाँति अपने वश मे कर लेना है इन को जीतना है। विवेक पूर्वक अभ्यास और वैराग्य के द्वारा ये वश में हो सकता है, परमात्मा की प्राप्ति के मनुष्य जिन साधनो मे अपने शरीर, इन्द्रिया और मन को लगाना चाहे उनमे जब वे अनायास ही लग जाए और इसके लक्ष्य से विपरित मार्ग की और ताके ही नही, तब समझना चाहिए कि ये वश मे हो चुके है। जिस मनुष्य के शरीर, इन्द्रिय और मन वश मे हो जाते है वह अनायास ह संसार समुद्र से अपना उद्वार कर लेता है एंव परमानन्द स्वरूप परमात्मा को प्राप्त करके कृतार्थ हो जाता है, इसलिए वह स्वयं अपना मित्र है।

शरीर, इन्द्रिय और मन–इन सबका नाम आत्मा है। ये सब जिसके अपने नही है व विपरित कार्य में लगे रहते है, जो इन सबको अपने लक्ष्य के अनुकूल इच्छानुसार कल्याण के साधन में नही लगा सकता वह 'अनात्मा' है– भाव आत्मवान नही है। ऐसा मनुष्य स्वंय मन, इन्द्रिया आदि के वश होकर कुपध्य करने वाल रोगी की भाँती अपने ही कल्याण साधन के विपरित आचरण करता है। वह अदृता, ममता, राग–द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, मोह पाप कर्मो के कठिन बन्धन में पड जाता है। जैसे शत्रु किसी को सुख के साधन से वचिंत करके दुख भोगने को बाध्य करता है, वैसे ही वह अपने शरीर इन्द्रिय और मन को कल्याण के साधन मे न लगाकर भोगो मे लगाता है तथा अपने आपको बार–2 नरकादि मे डालकर और नाना प्रकार की योनियो मे भरकाकर अनन्त काल तक भीषण दुख भोगने के लिए बाध्य करता है। यधपि अपने–आप में किसी का द्वेष न होने के कारण वास्तव मे कोई भी अपना बुरा नही चाहता, तथापि अज्ञान विमोहित मनुष्य आसक्ति के वश होकर दुख को सुख और अहित को हित समझकर अपने याथार्थ कल्याण के विपरित आचरण करने लगता है।